सूरदास द्वारा वर्णित राधा–कृष्ण की प्रेम लीलाओं का रहस्य–चिंतन

डॉ. सियाषरण ज्योतिषि • डॉ. नवीन तेकाम
रानीदुर्गावती स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, मण्डला, मध्यप्रदेष

हिन्दी साहित्य में जितना महत्व ब्रज भाषा का रहा है उतना किसी अन्य भाषा का नहीं रहा। ब्रज भाषा के इस महत्व का कारण भी दैवीय प्रेम के प्रतीक राधा और कृष्ण रहे हैं जिनके श्रृंगारमय चित्रण से लगभग सभी मध्यकालीन और कवियों ने हिन्दी साहित्य को न केवल समृद्ध किया बल्कि ऐसी अनुपम रचनाएँ प्रदान की जिनसे साहित्य वाटिका आज भी सुगंधित हो रही है। चाहे भक्तिकालीन भक्त या संत कवि हों या रीतिकालीन त्रिधाराओं के कवि राधा–कृष्ण के बिना रस, छंट और अलंकारों का चित्रण विषेषकर श्रृंगार का चित्रण सभी कवियों का प्रिय रहा है। इनमें से कुछ ने संयोग कुछ ने वियोग एवं कुछ ने दोनों का चित्रण करते हुए राधा और कृष्ण को अपने कथ्य का आधार बनाया।

महाकवि सूरदास ने अपने हृदय–चक्षुओं की दिव्य ज्योति से कृष्ण के सभी रूपों का मनभावन चित्रण किया है। केवल भ्रमरगीत ही नहीं उनके अन्य भी कई ऐसे पद मिल जाते हैं जहाँ राधा और कृष्ण के प्रेम की अलौकिकता का श्रृंगारमय चित्रण मिलता है। उनके एक पद में वे राधा और कृष्ण के एकरूप हो जाने संबंधी लोकप्रचलित मान्यता का चित्रण करते हुए लिखते हैं कि गोपिकाएँ जानती हैं कि भले ही सबके मन मे कृष्ण का वास हो किंतु कृष्ण के मन में राधा का ही वास है। वे अपने दुःख से राधा के दुःख को बड़ा मानतीं हैं और स्वयं को भूलकर राधा के प्रति चिंतित हो उठतीं हैं। उद्धव के अपने पर वे राधा को सांत्वना देते हुए कहती हैं कि– ''राधा, मोहन के रूप को तो तू पी चुकी है अतः मथुरा में कृष्ण रूप–विहीन हो चुके हैं। सचमुच उद्धव उसी निरूप को रूपवान् बनानके के लिए तेरे अन्दर से उस रूप को निकालने आये हैं, क्योंकि रूप ही तो रूपविहीन को रूपवान् कर सकेगा।''

'मोहन मांग्यो अपनो रूप।
यहि व्रज बसत अच्यै तुम बैठीं तादिन तहाँ निरूप।
ताऊ पर तुम पर लैन पठाये मनौ धारि का सूप।।''[1]

राधा उद्धव से कहतीं है कि कृष्ण से बिछुड़ने का दंष हृदय में गड़ा हुआ है। उनका वह सलोना मुखड़ा मेरे दृष्टिपटल से विस्मृत ही नहीं हो पाता। मैं पष्चाताप की अग्नि में जल रही हूँ यदि इस पष्चाताप को खो दूँ तो मुझे अपनी पीड़ा का एक निदान मिल सके परंतु ऐसा मेरे लिए संभव नहीं है। सूरदास जी राधा के शब्दों में लिखते हैं–

''हरि बिछुरन की सूल न जाई
बलि–बलि जाऊँ मुखारबिन्दु की वह मूरति चित्त रही समाई।।
एक समै वृंदावन महियाँ गहि अंचल मेरी लाज छुड़ाइ।
कबहुंक रहसि देत आलिंगन कबहुंक दौरि बहोरत गाइ।।

VEETHIKA-*An Interdisciplinary International Research Journal*©2015 QTanalytics
2454-342x electronic ISSN

वै दिन ऊधौ विसरत नाहीं अंबर हो जमुन–तट जाइ।।
सूरदास–स्वामी गुन सागर, सुमिरि, सुमिरि राधे पछिताइ।।''

सूरदास जी के लगभग सभी ग्रंथों में राधा और कृष्ण की रास और लीलाओं का अलौकिक चित्रण हुआ है। सूरदास जी के अनुसार राधा और कृष्ण के बीच प्रेम रूपी बीज का अंकुरण उन दोनों की बाल्यावस्था में ही हो गया था और कुछ ही दिनों में सबको इस प्रेम की जानकारी भी हो गई थी। स्वयं यषोदा इस प्रेम को जानकर राधा से कहने लगती हैं– ''तू अपने जलज–जीत नयनों को चपला से भी अधिक चमकाकर न जाने श्याम का क्या करेगी। इस तरह से तू श्याम की ओर न देखा कर, श्याम के साथ हिल–मिलकर खेती है जिससे काम में बाधा पड़ती है। न जाने तू कौन सा मंत्र जानती है जो पढ़कर श्याम पर डाल देती है। उसे गाय दुहने दे और बार–बार यहाँ न आया कर।''[2] राधा भी यषोदा का ऐसा उत्त्र देती हैं कि यषोदा छटपटा जाती हैं किंतु यषोदा स्वयं राधा और कृष्ण के युगलबद्ध भावी जीवन की कल्पना को संजोये राधा को कहतीं हैं कि घर आते रहना। सूरदास जी के कृष्ण और राधा दोनों ही परमात्मा और जीवात्मा के प्रतीक हैं, दोनों में कोई अंतर नहीं किंतु लौकिक स्वरूप में मान का भाव दोनों को पृथक दिखा देता है। सूरदास ने अपने सूरासागर में राधा और कृष्ण का विवाह तक कराया है किंतु चैतन्य संप्रदाय राधा को परकीया मानकर चलता है। इस परकीया प्रेम के सूत्र ऋग्वेद तक पहुँचते हैं। किंतु वल्लभ संप्रदाय में राधा को परकीया नहीं माना गया है। भागवत् में भी इस संबंध में एक लोककथा उल्लखित है जिसमें बताया गया है कि एकबार ब्रह्मा ने कृष्ण की गायों और ग्वाल सखाओं को चुरा लिया। कृष्ण को पता चल गया और उन्होंने अपनी शक्ति के द्वारा इस बात को जानकर स्वयं ही उन गायों और गोपालों का रूप रख लिया। ब्रह्मा ने लगभग एक वर्ष तक सभी को अपने पास रखा। तब तक कई गोपियों की शादी उन गोपालों से हो चुकी थी ब्रह्मा ने उन्हें लौटा तो दिया किंतु तब तक वे उन गोपालों के रूप में उन सभी से विवाह कर चुके थे। इसीलिए भागवत् में न केवल राधा को बल्कि गोपियों को भी परकीया नहीं माना गया है।

राधा को स्वकीया माना गया हो या परकीया किंतु उनके प्रेम की पराकाष्ठा उन्हें और उनके साँवरे को एक कर देती है महारास में दोनों में कोई अंतर दिखाई नहीं पड़ता। सूरदास जी लिखते हैं कि राधा ओर कृष्ण दोनों मिलकर एक हो गये हैं। कृष्ण के कुण्डल और राधा के ताटंक अब पृथक–पृथक दिखलाई नहीं देते। दोनों कपोलों पर उनकी झक भर पड़ रही है, यह झलक सर्प के समान लहरें ले रही है। राधा के पर्वतों पर दोनों के मुख चंद्रमा के समान उदित हो रहे हैं। दोनों की आँखे मिलकर चार हो रही हैं। चंद्रमा लज्जित है कि पृथ्वी पर दो–दो चंद्र एकसाथ उदित हो गये हैं।

''कुण्डल संग ताटंक एक भये युगल कपोलन झाई।
एक उरग मानों गिरि ऊपर द्वै ससि उदय कराई।।
चारि चकोर परे मनो फंदा चलत है चंचलताई।
उडुपति गति तजिरह्यो निरखि लजि सुरदास बलिजाई।।''[3]

यमुना के पुलिन का राधा–कृष्ण के जीवन में विषेष महत्व रहा है। राधा के प्रसंग में सदा यही बाताया जाता है कि कृष्ण राधा से आखिरी बार यमुना के पुलिन पर मिले थे किंतु एक और बड़ी घटना है जिसके कारण राधा और कृष्ण दोनों के लिए यमुना के इस पुलिन का महत्व है। महारास का दिन भी एक विषेष महत्व का है जिसके लिए कृष्ण ने अपनी बाँसुरी बजाकर सभी गोपियों को आमंत्रित किया था।

उनकी महारास के समय जब राधा और कृष्ण आलिंगन बद्ध होकर जिस गोल घेरे में चक्कर लगाते हैं उसका, वृंदावन की महक का, महारास में गोपियों के द्वारा कृष्ण को दी जाने वाली गारियों का सभी का राधा के जीवन में बड़ा महत्व है जिसके कारण राधा ने उसी स्थान को अपना निवास बना लिया। वह राधा का विवाह संस्कार था जिसे महारास के नाम से जाना जाता है। कृष्ण की मुरली ने स्वयं सभी गोपियों को इस विवाह का निमंत्रण दिया था। उनके द्वारा लगाये चक्कर उनके विवाह के फेरे थे। समूचा वृंदावन विवाह की वेदी था। विवाह के बाद गोपियों ने गारी गाकर संस्कार संपन्न किया और फिर सभी ने मिलकर इस खुषी में रास भी खेली यह घटना यमुना के पुलिन पर हुई थी इसीलिए राधा के जीवन में यमुना के पुलिन का विषेष महत्व रहा है। राधा के विवाह के पष्चात् उसकी प्रसन्नता का उल्लेख करते हुए सूरदास जी लिखते हैं–

''तब नागरि जिय गर्व बढ़ायी।
मे समान तिय और नाहिं कोउ, गिरिधर मैं ही बस करि पायी।।
जइ जोन कहत, करत सोइ सोइ पिय, मेरे हित यह रासय उपायौ।
सुंदर चतुर और नहिं मो सी देह धरे की भाव जनायौ।।''[4]

परंतु नारी रूप में अवतरण के पष्चात् राधा नारी स्वभाव से विवष हो कृष्ण को अपने अधीन जान कहती हैं कि नृत्य करते करते मैं थक गयी हूँ पैरों में पीड़ा हो रही है। धरा पर चलते ही नहीं बनता। मुझे जरा अपने कंधों पर बैठा लो थोड़ी देर विश्राम करना चाहती हूँ। राधा के गर्व वचन सुनकर कृष्ण मुस्काने लगते हैं क्योंकि यहाँ उनको अपना षिकार(अहं) मिल गया और वे उसका षिकार कर वहाँ से अंतर्धान हो गये। राधा यह देख मूर्छित हो गईं और बाकी गोपियाँ रुदन करने लगीं। सूरदास लिखते हैं–

''कहै भामिनी कंत सों मोहि कन्ध चढ़ावहु।
निरत करत अति भ्रम भयौ ता भ्रमहि मिटावहु।।
धरनी धरत बनै नहीं पग अतिहि पिराने।
तिया वचन सुनि गर्व के पिय मन मुस्काने।।''[5]

परंतु उनके दर्प–षून्य होते ही कृष्ण दोबारा अपनी राधा के पास दौड़े चले आते हैं और रास लीला पुनः प्रारंभ हो जाती है। रासलीला का समय भागवत् की गणना के अनुसार छह माह के बराबर था किंतु सूरदास जी ने इसे एक कल्प के बराबर माना है। वे लिखते हैं– ''निसि वर कल्प समान बढ़ाई गोपिन को सुख दीन्हों।''

रमाकांत रथ आधुनिक उड़िया साहित्य के शीर्षस्थ कवियों में से एक रहे हैं और उनकी सर्वाधिक चर्चित कृति 'श्रीराधा' का भारतीय ज्ञानपीठ के द्वारा हिन्दी में अनुवाद प्रस्तुत किया गया है जिसमें राधा के प्रबल पक्ष का उल्लेख करते हुए रमाकांत जी लिखते हैं कि– ''मैं किसी ऐसी राधा की कल्पना नहीं कर सकता जो कृष्ण को वृंदावन छोड़ने के लिए, उस पर निष्ठा न रखने के लिए चिड़चिड़ाती हो और उसके प्रति प्रेम को मान्यता दिलवाने के लिए या उसके साथ रहने के उपाय ढूँढने के लिए उससे कहती हो। ऐसा कोई भी आचरण उसके लिए अप्रासंगिक है। प्रारंभ से ही वह ऐसी कोई आषा नहीं पाले रखती : कुंठित होकर निराष होने की भी उसके लिए कोई संभावना नहीं है। अगर वह निराष हो सकती है तो केवल इसीलिए कि कृष्ण को जिस सहानुभूति तथा संवेदना की आवष्यकता थी, वह उसे न दे सकी। न दे पाने की पीड़ा कुछ लोगों के लिए न ले पाने की पीड़ा से बड़ी होती है।''[6]

सूरदास जी ने दानलीला के कई पदों में राधा–कृष्ण के लिए चिर–संयोग का उल्लेख कर उन्हें भक्ति–युगल का आश्रय बताया है। उन्होंने ''राधा, कृष्ण और गोपियों के प्रेम की समस्त प्रकार की अवस्थाओं का विषद चित्रण किया है।''[7] सूरदास जी के सूरसागर में 'श्रीकृष्ण राधामिलन', 'पनघट–प्रस्ताव', 'दानलीला', 'मानलीला', 'रासलीला' आदि राधा और कृष्ण के अलौकिक प्रेम के जीवंत दस्तावेज हैं। 'चकई–भौंरा' के खेल के समय हुई राधा और कृष्ण की मुलाकात का चित्रण करते हुए उन्होंने कृष्ण के द्वारा राधा को फुसलाने और 'खरिक' के बहाने मुलाकतों के दौर से उनके प्रेम के अंकुर का वर्णन किया है जिसके कारण आज पूरा जगत् राधा और कृष्ण को एक ही नाम से जानता है। राधा के सर्प–दंष की घटना हो या रासलीला की या उद्धव प्रसंग राधा और कृष्ण के प्रेम का जैसा चित्रण सूरदास ने किया वह दोनों आँखों वालों के लिए भी दुर्लभ है।

संदर्भ–

1. सूरदास का काव्य वैभव, डॉ0 मुंषीराम शर्मा, ग्रन्थम प्रकाषन कानपुर, संस्करण–1965, मूल्य–12. 25 रुपये
2. सूरदास, ब्रजेष्वर वर्मा, लोकभारती प्रकाषन, इलाहाबाद, चतुर्थ संस्करण– 1979, मूल्य– 35 रुपये,पृ.–267
3. सूरसागर(ना. प्र. सं. 1756)
4. सूरसागर,(ना. प्र. स. 1718)
5. सूरसागर(ना. प्र. अ. 1719)
6. श्रीराधा, रमाकांत रथ, भारतीय ज्ञानपीठ, प्रथम संस्करण– 1990, मूल्य– 90 रुपये, पृ.– 265–266
7. सूरदास, ब्रजेष्वर वर्मा, लोकभारती प्रकाषन, इलाहाबाद, चतुर्थ संस्करण– 1979, मूल्य– 35 रुपये, पृ.– 61